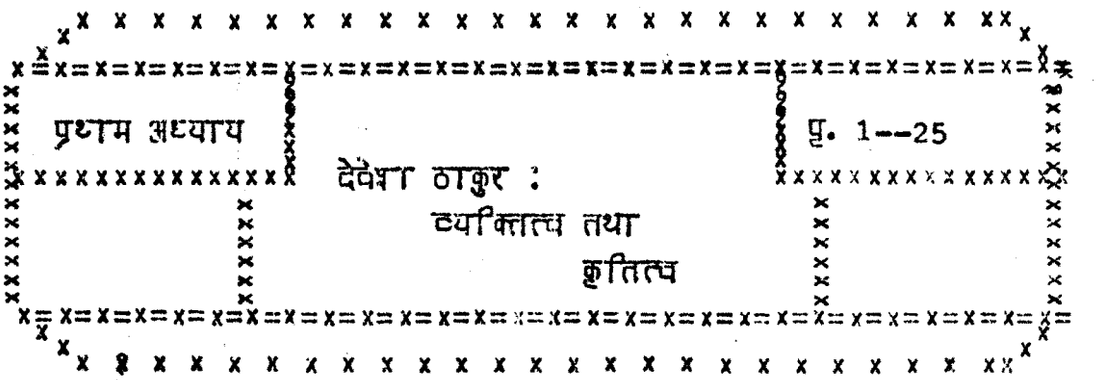

प्रथम अध्याय

पृ. 1--25

देवेश ठाकुर : व्यक्तित्व तथा कृतित्व

प्रथम अध्याय

देवेश ठाकुर : व्यक्तित्व तथा कृतित्व

किसी भी साहित्यिक कलाकृति के सम्यक् अनुशीलन के लिए साहित्यकार के व्यक्तित्व तथा कृतित्व का अध्ययन आवश्यक होता है। कोई भी कलाकार अपने समय की परिस्थितियों एवं यथार्थ से प्रेरित होकर ही सार्थक साहित्य सृजन करता है। अत: साहित्यिक कलाकृति के वस्तुपरक मूल्यांकन के लिए उसकी परिस्थितियों, अनुभावों. प्रेरणाओं और विचारों आदि का विश्लेषण आवश्यक है।

"भ्रमभंग" के लेखक उपन्यासकार डॉ. देवेश ठाकुरजी के सम्यक् व्यक्तित्व का परिचय प्राप्त करने के लिए शोधार्थी ने उनके व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर प्रकाशित अबतक के ग्रन्थों को अध्ययन का आधार बनाया है। "भ्रमभंग" उपन्यास के अध्यन के संदर्भ में उपस्थित हुअे कतिपय प्रश्नों के समाधान के लिए शाधार्थी को देवेशजी से साक्षात्कार करने का भी सौभाग्य प्राप्त हुआ है।

सामान्यत: किसी व्यक्ति का समग्रत: आकलन करने के लिए प्राप्त सामग्री के अध्ययन को तीन भागों में विभाजित किया जाता है। जीवन - परिचय, व्यक्तित्व और कृतित्व।

१] जीवन-परिचय

इसके अंतर्गत पारिवारिक परिवेश, शिक्षा, विवाह, व्यवसाय, प्राप्त पुरस्कार आदि का विवेचन किया जाता है।

क] जन्म, शिक्षा तथा पुरस्कार

देवेश ठाकुर का जन्म २३ जुलाई सन् १९३३ ई. को इनकी

ननिहाल पैठानी [अल्मोडा, उत्तर प्रदेश] में हुआ | आरम्भिक शिक्षा पैठानी एवं नजीबाबाद में हुई | हाईस्कूल की परीक्षा पास करने के बाद आगे की पढाई करने के लिए नगीना चले गए | फिर बी. ए. और एम्. ए. की शिक्षा डी. ए. वी. कॉलेज देहरादून से प्राप्त की | १९५५ में एम्. ए. पास करने के बाद बम्बई चले आये और कुछ समय के लिए प्रतिरक्षा कार्यालय में . . क्लर्क रहे | १९५६ में सिडनहम कॉलेज में प्रवक्ता बन गए | प्राध्यापकी करते हुए १९६१ ई. में सागर विश्वविद्यालय से पीएच्. डी. और १९७१ ई. में डी. लिट्. की उपाधि प्राप्त की | डी. लिट्. का शोध प्रबंध "आधुनिक हिन्दी साहित्य की मानवतावादी भूमिकाएँ" १९७५ में उत्तर प्रदेश सरकार व्दारा "तुलसी पुरस्कार" से पुरस्कृत किया गया |

ख] <u>पारिवारिक परिवेश</u>

आर्थिक अभावों के कारण बचपन से ही देवेशजी के जीवन में संघर्ष यात्रा प्रारम्भ हुयी थी | वास्तविक जीवन संघर्ष १९४८ ई. में शुरु हुआ | क्योंकि इसी साल इनके पिताजी पुलिस की नौकरी से निवृत्त हो गये थे | परिवार में ज्येष्ठ पुत्र होने के कारण पूरे परिवार के पालनपोषण का दायित्व देवेशजी के ऊपर आ पडा | उस समय ये नवीं कक्षा में पढ रहे थे | दो छोटे भाई तथा एक बहन की पढाई का सारा भार इन्हें ही सम्भालना था | इन्हें पुलिस विभाग में नौकरी करने की सलाह पिताजी बार बार दिया करते थे लेकिन इन्होंनें अपनी पढाई स्वावलंबन से शुरु की | देवेशजी ने पूरी निष्ठा से अपनी पारिवारिक जिम्मेदारियों का निर्वाह करते हुए अपनी अध्ययनशीलता निरन्तर कायम रखी |

ग] <u>अर्थोपार्जन</u>

इसके लिए उन्हें छोटे-मोटे कार्य भी करने पडे | छोटे-मोटे ट्यूशन या शाम को किसी प्रावेट स्कूल में पढाने में भी इन्होंने संकोच नहीं किया | पढाई पूरी करने तथा जीविकोपार्जन के लिए इन्हों की कई

मुसीबतों का हिम्मत से सामना किया। इन्होंने ढाबेनुमा होटल में भी काम किया, अखबार बेचे, कॉलेज के साइकल स्टैंड पर काम किया, मजदूरी की, होटल में जूठी प्लेटे उठाने से लेकर ईटों के भट्टे तक अनेक तरह के छोटे-मोटे कार्य किये। अभाव और गरीबी का इतनी निकटता से परिचय प्राप्त करने के पश्चात भी ये कभी निराश नहीं हुए। इसप्रकार संघर्ष करते हुए, भविष्य के सुन्दर सपनों की चाह लिए इन्होंने एम्. ए. तक की शिक्षा प्राप्त की।

घ] साहित्य सृजन प्रारम्भ

आरम्भ में मिलों के विशिष्ट माहौल के कारण देवेशजी काव्यरचना के प्रति आकर्षित हुए। एम्. ए. के दिनों में इनका पहला काव्य-संग्रह "मयूरिका" प्रकाशित हुआ। एम्. ए. की पढाई पूरी करने के बाद इन्होंनेप्रतिरक्षा विभाग में क्लर्क [ऑडिटर] की नौकरी कर ली। नौकरी के लिए बम्बई आने के बाद भी इनका साहित्य-प्रेम कायम रहा। लेकिन अपनी निर्णय शक्ति तथा महत्त्वाकांक्षा के कारण इन्हें नौकरी से त्याग पत्र देना पडा। बम्बई के अनेक कॉलेजों में प्राध्यापक के पद के लिए आवेदन - पत्र भेजे, लेकिन वहाँ भी उन्हें असफलता मिली। अन्ततः इन्होंने फिर देहरादून जाकर बी. एड्. करने का निश्चय किया। उनके सामने देहरादून जाते का रेल-भाडा, फीस, पेट-पालन आदि समस्याएँ खडी होते हुए भी वे देहरादून गए और वहाँ फिर से पहले की तरह छोटे-मोटे काम करना शुरु किया।

ड.] अध्यापकीय पेशा *

। देवेशजी को जब महाराष्ट्र के सरकारी कॉलेज से प्राध्यापकी के लिए इण्टरव्यू का बुलावा आया तब बम्बई जाने के लिए उनके पास पैसे नहीं थे। /फिर भी दोस्तों की सहायता से बम्बई पहुँचे और सौभाग्य से सिड्नहम कॉलेज में उन्हें प्राध्यापक की नौकरी मिल गयी। और जीवनसागर में स्थिरता आने लगी। इतने में राजकोट स्थानांतरण हो जाने से इनके जीवन में फिर एक बार अस्थिरता आ गयी। देवेशजी राजकोट तो

गए और वहाँ उन्होंने अपनी अद्भुत निर्णय-शक्ति तथा संघर्ष-क्षमता का परिचय देते हुए, दूसरी कोई नौकरी न होने के बावजूद भी, वे सरकारी नौकरी छोडकर फिर वापस बम्बई आये। वहाँ रुइया कॉलेज में प्राध्यापक के रूप में फिर से नियुक्त हो गए और वहाँ हिन्दी विभागाध्यक्ष एवं शोध - निर्देशक के रूप में काम करते रहे। इसी कॉलेज से हिन्दी विभागाध्यक्ष के पद से अगस्त १९९३ को सेवानिवृत्त होकर वर्तमान में एक नए हिंदी साप्ताहिक के कार्यालय में कार्यरत रहे है।

च] <u>विवाह तथा संतान</u>

देहरादून से बम्बई, बम्बई से राजकोट और पुन: राजकोट से बम्बई तक की इस संघर्ष-यात्रा के बीच अनेक मधुर संबंधो का संयोग भी हुआ, लेकिन अपने विशेष आदर्शों के कारण एवं पारिवारिक दायित्व की अनुभूति के कारण ये मधुर संबंध टूटते गए। अन्तत: १२ अक्टूबर १९६१ को मेरठ में इनका विवाह सुश्री सुशीला जी के साथ अत्यन्त ही सीधे-सादे ढंग से संपन्न हुआ। विवाह कार्य में परम्परा निर्वाह का विचार बिल्कुल नहीं किया। विवाह के समय देवेशजी को पत्नी की जाति का भी पता नहीं था। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी से मिलने देवेशजी जब चण्डीगढ गये थे। तब द्विवेदी जी के पूछने पर पत्नी से ही उसकी जाति पूछकर उन्होंने द्विवेदीजी को बता दिया था। भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी के नेता सत्यपाल डंग की बहन सुशीलाजी लेडी हार्डिंग्ज अस्पताल, दिल्ली में सिस्टर इन चार्ज थी। मई ६१ में किसी मित्र ने सुशीलाजी की बात चलाई और फलस्वरूप विवाह के लिए देवेशजी का इण्टरव्यू मेरठ में हुआ। देवेश जी को एक शालीन नाम को सार्थक बनानेवाली "सुशील" पत्नी मिली है। यह उनका सौभाग्य है क्योंकि उनकी पत्नी ही उनके लिए सबकुछ है। "मैं तो यह सोचता हूँ कि आज देवेश ज्योंभी बन पाया है, उसमें ५० प्रतिशत से अधिक भाग शीला भाभी का है। वे देवेश की पत्नी हैं, प्रेमिका भी हैं, दोस्त भी हैं और माँ तथा बहन भी हैं। देवेश में जो निर्द्वन्द्वता है वह शीला भाभी के कारण ही है और उन्हीं के कारण वह अपने को

हमेशा भरा-भरा-सा महसूस करता है और किसी भी स्थिति से टक्कर लेने को तैयार हो जाता है।"[1] उनके वैवाहिक जीवन के बारे में डॉ. इन्दुबाली कहती है कि, "बीस-बाइस साल के वैवाहिक जीवन के बाद भी इस दम्पति में सम्बन्धों की ताजगी है। खूब मजाक करते हैं, एक दूसरेपर चिल्लाते हैं, पर पूरी तरह एक-दूसरे के प्रेमी, दोस्त और सबकुछ।"[2]

देवेशाजी के दो सुन्दर, सुशील कन्याएँ हैं। वे बेटा और बेटी में फर्क नहीं मानते। सन्तान के प्रति उनके मनमें मोह रहा है। वे कहते हैं, "इसलिए एक अत्यन्त सुन्दर विदूषी और संपन्न महिला के साथ बहुत आत्मीय हो जाने के बाद भी यह मालूम होनेपर कि, वह मुझे सन्तान नहीं दे सकती, मैंने विवाह के लिए असमर्थता प्रकट कर दी।"[3] उनसे साक्षात्कार के समय देवेशाजी के शब्दों में, "मैं सन्तान के मामले में बडा भाग्यशाली रहा हूँ। मेरी दो बेटियाँ ही मेरी जिन्दगी है। वही हमारी सबकुछ हैं। हम पति-पत्नी अपनी बेटियों से बहुत खुश हैं।"[4]

उनकी बडी बेटी आभा एम्. डी. [फिजीशियन] और डी. एन्. बी. हैं, और अमेरिका जाकर पिछले दिनों ही लौटी है। उसकी शादी एक एक मेधावी सर्जन संजय से हो चुकी है। दूसरी बेटी आरती अर्थशास्त्र में एम्. ए. हैं और बम्बई विश्वविद्यालय से बी. ए. और एम्. ए. में "रैंक होल्डर" है। वह एक स्थानीय कॉलेज में प्राध्यापक है। वह उसका विवाह आंध्रप्रदेश के एक नवयुवक इंजिनियर वाय्. प्रसाद से हो चुका है। उनके परिवार का वातावरण प्रसन्न है।

छ] <u>संघर्षमय जीवन</u>

देवेशाजी की संघर्ष-यात्रा के कुछ अन्य पडाव भी हैं जो "भारत लॅज" और वर्सोवा स्थित कमरे के जीवन से लेकर माटुंगा के रुइया कॉलेज, हॉस्टल और वर्तमान में घाटकोपर के स्थायी निवास-स्थान तक बिखरे पडे हैं। "भ्रमभंग" उपन्यास में इस संघर्ष का स्वल्प विशद रूप से चित्रित हुआ है। वस्तुत: "भ्रमभंग" उनकी पारिवारिक संघर्षकथा की यथार्थ

अभिव्यक्ति है | उनके जीवन संघर्ष का दस्तावेज है | उनकी आत्मा की आवाज है | "स्व" की रक्षा का प्रयास है |

माँ के साथ सम्बन्ध विच्छेद करने का निर्णय "स्व" की रक्षा के प्रयास स्वरूप ही था | देवेशा ने पिता की मृत्यु के बाद पूरे परिवार को बम्बई में अपने घर बुलाया था | बहन को नौकरी भी दिलवा दी | उनकी पत्नी ने परिवार के लिए बिना कुछ शिकायत किए नौकरी की लेकिन अपनी बहन का "कमाऊ" होने का घमंड, उसकी स्वार्थी वृत्ति, ब्रिगडैल भाई की हरकतों तथा माँ व्दारा उनका ही पक्ष समर्थन करने की प्रवृत्ति आदि के कारण सन १९७० में देवेशाजी को दिल का दौरा पडा | तब उन्होंने मानसिक तनाव से मुक्ति पाने के लिए परिवार से सम्बन्ध विच्छेद करने का निर्णय किया | डॉ. चंद्रकांत बांदिवडेकरजी ने स्नेहसंबंध और आर्थिक सुविधा का संबंध स्पष्ट करते हुए कहा है, -"स्नेह के संबंध-सूत्र आर्थिक सुविधापर न्योछावर हो जाते हैं | इस पारिवारिक विघटन और आर्थिक संबंधों के दृढीकरण का परिणाम तमाम वैयक्तिक पवित्र संबंधों को नष्ट हो जाने में होता है |"[५] आज देवेशाजी अपने परिवार के साथ सुस्थिति में शांती की जिन्दगी व्यतीत कर रहे हैं |

२] निष्कर्ष

समग्रत: यह कहा जा सकता है कि, देवेशाजी का सम्पूर्ण जीवन आर्थिक कठिनाइयों के विरुध्द सामना करने में बीत गया है | संघर्ष के झंझावतों ने देवेशाजी को जरूर झकझोरा है, हिलाया है, लेकिन ये उन संघर्षों से सतत लडते हुए निरन्तर दृढ होते चले गए | परिणामस्वरूप इनमें संघर्ष करने की तथा विपरीत परिस्थितियों से लडने की अदभूत क्षामता भरी हुयी है | वे जात पाँत व्यवस्था के विरोध में है | पारिवारिक दायित्व का बोध उनमें है | फिर भी उससे सम्बन्ध विच्छेद करने का निर्णय "स्व" की रक्षा के प्रयास स्वरूप हैं |

३] व्यक्तित्व

डॉ. देवेश ठाकुरजी का व्यक्तित्व अत्यंत विवादास्पद रहा है। बम्बई के पिछले पैंतीस वर्षों के आवास काल में शिक्षा और साहित्य जगत् में उन्होंने अपने लिए अनेक विवाद निर्माण किए हैं। साथ ही मित्रों से अपने प्रति अपनापन तथा प्यार भी प्राप्त किया है। इन दो ध्रुवों के बीच जीनेवाले व्यक्ति में कितनी सक्रियता और विविधता होगी यह जान लेना आवश्यक है। देवेशजी के व्यक्तित्व के विभिन्न आयामों की पहचान करने के लिए शोधार्थी ने प्रा. सतीश पाण्डेय लिखित "कथाशिल्पी देवेश ठाकुर", तथा सम्पादक नन्दलाल यादव के "देवेश ठाकुर : व्यक्ति, समीक्षक और कथाकार" आदि ग्रंथों में देवेशजी के कुछ मित्रों, सहयोगी अध्यापकों तथा अन्य परिचितों व्दारा दी हुयी जानकारी का आधार ग्रहण किया है।

"भ्रमभंग" उपन्यास में भी देवेशजी के आत्मचरित्रात्मक अंश बिखरे हुए हैं। लेखक डॉ. देवेशजी से शोधार्थी ने स्वयं संपर्क साधकर उन के जीवन सम्बन्ध में दृष्टिकोण जानने के प्रयत्न किए हैं। देवेशजी जैसे विवादग्रस्त व्यक्तित्व का सही-सही मूल्यांकन करने के लिए उसके आसपास के माहौल का अध्ययन तथा उनके साथ संपन्न साक्षात्कार से शोधार्थी को कुछ निश्चित निष्कर्ष निकालने में सहायता मिली है।

क] बाह्यरूप

बुधवार २२ दिसम्बर १९९३ को शिवाजी विश्वविद्यालय के अतिथिगृह [कमरा क्र. ८] में उपन्यासकार डॉ. देवेशजी के प्रत्यक्ष दर्शन करने का सुयोग मुझे [शोधार्थी को] प्राप्त हुआ। जिस अपनत्व भरी मुस्कान के साथ मेरा [शोधार्थी का] स्वागत किया गया और चाय-पानी के की व्यवस्था की गई थी, उससे विश्वास ही नहीं होता था कि, मैं किसी महान रचनाकार के साथ हूँ, या किसी आत्मीय संबंधी के साथ। उस समय मुझे प्रा. सतीश पाण्डेय के उस कथन की याद आयी, "मैंने उनके बारें में

यह अनुमान लगाया था कि वे अत्यन्त ही गम्भीर, अध्ययन-अध्यापन से सम्बन्ध रखनेवाले एक कुशल अध्यापक हैं। .... तीन-चार वर्षों के बाद मेरा यह भ्रम टूटा। तब मैंने महसूस किया, वे अत्यन्त ही सरल स्वभाव-वाले स्नेही व्यक्ति हैं।"[६] मुझे भी डेढ-दो घंटों के परिचय के बाद इसी अनुभूति की प्रतीति हुअी।

देवेशजी के बाल्यकाल के मित्र सुदेश और दिनेश के मतानुसार वह लम्बा, पतला, छरहरा, गेहुआ रंग, दुर्बल देह, झुके-झुके कंधे, चेहरे पर अबोधता, घुले-मिले छलकते से बहुत ही चंचल और शरारती थे। दूसरों की नकल उतारकर खिजानेवाला और आनन्द लेनेवाला है। छोटे कद वाले देवेश के शरीर में सिर्फ हड्डियाँ दिखाई देती थीं, फिर भी बचपन में उसे अखाडे का शौक था। आज बिखरे बालों और बढी हुयी श्वेत-शाम दाढी से गम्भीर बना हुआ सा उनकी चेहरा, होठों के बीच दबा हुआ "पाइप" और आँखों पर मोटे फ्रेम का चश्मा चढा हुआ है। डॉ. चन्दुलाल दुबेजी की दृष्टि से, "इन वर्षों में बाकी चीजें वे ही हैं, केवल थोडा मुटापा बढ गया है .... आप अपनी जो रचनाधर्मिता लेकर बम्बई आये थे, उसमे रंचमात्रा भी कमी नहीं आई है। इसी बेहद परिश्रम के कारण अक्सर सेहत की भी उपेक्षा कर बैठते हैं।"[७] आज भी देवेशजी दस-बारह घण्टे हररोज लेखन-पठन का काम करते हैं।

डॉ. ललित शुक्लजी को देवेश हँसमुख साथी और जिन्दादिल इन्सान लगता है। तो सरजू प्रसार मिश्र की दृष्टि से - "देखने में मध्यम कद का गौरवर्णी "लघुमानव" किन्तु परिश्रम और प्रतिभा में अद्वितीय।"[८] उनके चेहरे पर आत्मविश्वास की चमक, अबोधता और मासूमियत का मिला-जुला भाव दिखाई देता है। इसी अपनत्व भाव से पास आनेवाले को अपना-सा बना लेते हैं। देवेशजी अपनी सभी अच्छाइयों और बुराइयों को सबके सामने स्पष्ट रूप में व्यक्त करते हैं। यह स्वभाव की सरलता, निष्कपटता और ईमानदारी है।

ख] वेशभूषा

देवेशजी हमेशा खाददर के कुर्ते - पैंट पहनते हैं। लेकिन आजकल उनके पहनाव में कभी-कभी बदलाव भी नजर आता है। देवेशजी के साथ मैंने जब वार्ता की थी तब इस संदर्भ में उन्होंने कहा था - "मैं अपने बुढापे को ढँकने के लिए ही आजकल ऐसे कपडे पहनने लगा हूँ।"[९] कॉलेज की गरीबी के दिनों के देवेश के बारे में सुदेश कुमार लिखते हैं, "खासकर मेरे लिए वह देहरादूनवाला वही देवेश है, शरारती, मजाकिया, हँसमुख और बिखरे बालोंवाला देवेश - जिसके बदनपर खादी या मलेशिया का कुर्ता - पाजामा और पैरों में खडाऊँ हुआ करती थी।"[१०] देवेशजी के कुर्ते के कपडे की बुनावट, रंग, काट-छाट, चप्पल आदि के चुनाव में उनकी कलात्मक नजर दिखाई देती है। उनके स्वभाव में सुरुचि और व्यवस्था-प्रियता है। आम साहित्यकारों जैसा बिखराव दिखाई नहीं देता। अनुशासन प्रियता उनके व्यक्तित्व की सबसे बडी विशेषता है।

ग] दिनचर्या तथा शौक

देवेशजी फर्शपर बैठकर लिखते हैं। एक छोटी-सी तिपाई पर उनकी लेखन-सामग्री रखी हुयी होती है। लेखन कार्य में वे देर रात तक और सबेरे आठ तक लगे रहते हैं। उसके बाद अभ्यागतों से मिलते रहते हैं।

देवेशजी के शब्दों में, "मेरे मित्रों में टॅक्सी ड्राइवर, गेट-कीपर और मिलों में काम करनेवाले मजदूरों से लेकर बडे बैंक अधिकारी, उद्योगपति, लेखक, सम्पादक और मिलों के प्रबंधक आदि होते हैं। उनके साथ समय बिताने से मुझे सुख तो मिलता ही है, बहुत सी ऐसी बातें भी जानने को मिलती हैं, जिनकी कल्पना तक कमरे में बैठकर नहीं की जा सकती।"[११]

देवेशजी को अच्छी-अच्छी चीजें खाने का शौक है। सामिष भोजन तथा "सूप" उन्हें अधिक प्रिय है। "सामिष भोजन के बाद "सूप" मेरी दूसरी पसंद होगी। केला और चीकू मेरे मनपसन्द फल हैं।"[१२] पाइप पीना और पान खाना उन्हें अच्छा लगता था लेकिन सेहत के कारण

आजकल इन्होंने पाइप पीना छोड दिया है | इन्हें मँहगी से मँहगी चीजें खारीदने का शौक है | पुस्तकों तथा पत्रिकाओं को खारीदने के अलावा सागर किनारे घूमना, पौधे लगाना, लव बर्डस् पालना, संगीत सुनते रहना और खासकर कमरे में अंधेरा करके लाइट म्युजिक के कॅसेट सुनने का आनंद वे कुछ और ही मानते हैं | अवकाश के दिनों में पहाडों पर जाना, यात्राएँ करना, सडको पर घूमना इन्हें अच्छा लगता है |

घ] आंतरिक रूप

व्यक्तित्व के आंतरिक रूप के अध्ययन के अंतर्गत व्यक्ति के गुण, स्वभाव, रुचि, प्रतिभा, मानसिक क्रियाकलाप आदि का अध्ययन किया जाता है |

ड.] स्वाभिमानी और ईमानदार

देवेशजी स्वभाव से स्वाभिमानी और प्रामाणिक है | उनके दोस्त जितेन्द्रसिंह लिखाते हैं - "देवेश सचमुच बहुत अतिवादी है | प्यार करने में भी और घृणा करने में भी | प्यार करेगा तो अपना सबकुछ लुटा देगा, घृणा करेगा तो भी पूरी शिद्दत और ईमानदारी के साथ करेगा | गलत या झूठ उससे सहा नहीं जाता | उसने इसके लिए अपने परिवार वालों तक को नहीं बख्शा और एक बार सम्बन्ध तोड दिया तो फिर लौटकर उनकी तरफ नहीं देखा |"[१३]

अपनी ईमानदारी के कारण ही देवेशजी अपनी कमजोरियों को भी स्वीकार करते हैं | वे अपने साथ औरों को भी ईमानदार देखना चाहते हैं | डॉ. त्रिभुवनराय का कहना है - "वह अपनी ईमानदारी के तहत औरों से भी ईमानदार होने की अपेक्षा करता है | परन्तु आज का व्यावहारिक व्यक्ति परिश्रम की तुलना में "शॉर्टकट" का मार्ग जादा पसंद करता है |"[१४] देवेश की स्वाभिमानी वृत्ति के बारे में, डॉ. इन्दुबाली ने लिखा है कि, "अपना ही नहीं, दूसरों का दुःख सहने की भी उसमें अपार क्षमता है | अपनी दयनीयता का रोना वह कभी नहीं रोया | देवेश हर कण में स्वाभिमानी है |"[१५]

च] सादगी और सरलता

देवेश ठाकुर सीधे, सरल, निश्चल और भावुक व्यक्ति हैं। अपनी इसीप्रकार की सरलता के कारण वे थोडे से स्नेह और थोडीसी सदाशयता पर बेमोल बिक जाते हैं। अथावा अतिशय उदार हो जाते हैं। अपने विरोधियों के पीछे हाथ धोकर पडते हैं। किसी दु:खद घाटना की प्रतिक्रिया उनपर बहुत तीव्र होती है। कुछ प्रसंगों पर देवेश बहुत ही भावुक हो जाते हैं। बात करते करते उनकी आँखों में आँसु आ जाते हैं। वे स्वयं को घामंडी नहीं मानते। उनके साथ किसी भी विषाय-पर संवाद किया जा सकता है। इसप्रकार देवेश का अंतर सीधा, सरल, स्पष्ट तथा संवेदनशील है।

छ] संयमी, दृढनिश्चयी तथा आस्थावान

स्पष्टवादिता और ईमानदारी आदि गुणों के कारण देवेशजी अपने विरोधियों के कट्टर विरोधी हैं। देवेशजी महत्वाकांक्षी और आत्मविश्वासी भी हैं। डॉ. इन्दुबाली का कथान है - "सागर मन्थान के बाद निकला था विष और वह पीकर शंकर हो गए थे शिव। वैसे ही मुझे लगता है जीवन की कटुताओं और विषामताओं का विष पीते पीते देवेश शिव हो गया है।"[१६]

देवेश ठाकुर का निश्चय भी दृढ है। प्राध्यापक बनने का उनका निश्चय दृढ रहा। उन्होंने अपने नाम को साहित्य में अमर करने का निश्चय किया। और आज वे एक श्रेष्ठ उपन्यासकार के रूप में प्रसिध्द हैं।

ज] संघार्षशील और कार्यक्षम

देवेशजी बहुत ही परिश्रमी व्यक्ति है। दिनचर्या व्यस्त रहती है। किसी भी काम को छोटा नहीं मानते। इसीलिए इन्होंने हेड होटल में जूठी प्लेटे धोई, साइकिल स्टैंड पर काम किया। देवेशजी की धुन, संघार्षशीलता और कार्यक्षामता विशिष्ट है। देवेशजी हमेशा ध्येय प्राप्ति के प्रति सजग रहते हैं। आर्थिक अभाव, परिवेश और

परिस्थितियों के साथ इन्हें हमेशा संघर्ष करना पडा है | परिणामत: वे अधिक दृढनिश्चयी और व्यावहारिक बन गये हैं | उनके मित्र जितेन्द्रसिंह ने लिखा है - "लगता है संघर्ष करना और करते जाना उसकी नियति में है | लेकिन इस बात का उज्ज्वल पक्ष यह है कि उसे संघर्ष में अन्तत: सफलता मिली हैं | और इसका श्रेय उसकी मेहनत, आत्मविश्वास और ईमानदारी को जाता है |"[१७]

झ] निर्णयक्षमता

देवेशजी ने हर प्रसंग में जोखिम उठाकर अपनी सही निर्णय-क्षमता का परिचय दिया है | घरवालों की दुच्ची मनोवृत्ति से त्रास्त होने पर देवेश को दिल का दौरा पडा तब अपने "स्व" की रक्षा तथा अपने बच्चों की भलाई की दृष्टि से परिवार से सम्बन्ध विच्छेद करने का निर्णय लिया | "भ्रमभंग" की भूमिका में "अपनी ओर से" में उन्होंने लिखा है - "एक क्षण आता है देवेश, जब निर्णय लेना ही होता है | चाहे वह कितना भी कठिन क्यों न हो | असमंजस के बीच जीवन नहीं जिया जाता |"[१८]

ञ] फक्कड और हँसमुख

देवेश कबीर की तरह फक्कड है | इसीकारण लोग या तो उनके मित्र होते हैं या दुश्मन | वे मध्यममार्गी कभी नहीं रहे | विश्वनाथ जी का कहना है - "देवेशजी जो देखते हैं, सोचते हैं उसे उसी रूप में कह देते हैं | इस अक्खडता के बावजूद वह अत्यन्त व्यावहारिक है |"[१९] देवेश किसी का उदार रखाना नहीं चाहते | "इस हाथ दे उस हाथ ले" वाली उनकी नीति है | सदैव हँसमुख रहना उनके व्यक्तित्व का सबसे आकर्षक पहलू है |

देवेशजी स्वयं कहते है, "मैं सीधा-सादा अकखड पहाडी आदमी हूँ | चारित्रिक विसंगतियों और मुखौटेबाजी से घृणा करता हूँ |"[२०] देवेशजी की धर्मपत्नी सुशीला ठाकुरजी का कहना है कि, "देबू बाहर से बहुत फक्कड, [अब मैं फक्कड का अर्थ समझ गयी हूँ] लापरवाह और

जिन्दादिल दिखाई पडते हैं | लेकिन भीतर वे उतने ही गंभीर, व्यवस्थित और अनुशासन प्रिय हैं |"[२१]

ट] सच्चा मित्र

देवेशजी लेन-देन वाली दोस्ती पसंद नहीं करते | वे अपने मित्रों पर प्राण कुर्बान करने के लिए भी तैयार रहते हैं | और उनके सभी दोस्त ऐसे ही हैं | पढाई के दिनों में उनके मित्रों ने उनकी अनेक प्रकार से सहायता की है | इसीकारण वे अपने मित्रों के बारे में कहते हैं, --
"एक ओर इसतरह के छोटे-छोटे अभाव थे और दूसरी ओर सहयोगी मित्रों की लम्बी कतार थी, जो बहुत ईमानदार, सच्चे और संवेदनशील थे |"[२२]

स्टुडंट कौन्सिल के चुनाव में दिनेश के लिए देवेश सबेरे पाँच बजे से रात्रि के एक बजे तक भूखो-नंगे प्रचार करते फिरते थे | डॉ. कमल-किशोर गोयनका को देवेश के साथ आपनी दोस्ती पर गर्व है | देवेशजी किसीको दोस्त बनाते हैं तो पुरी ईमानदारी के साथ | इसप्रकार देवेशजी की दोस्ती सच्ची है और उसमें जिन्दादिली है |

ठ] अनुशासनप्रिय

सबसे अमूल्य संपत्ति "पुस्तकों" को देवेशजी ड्राईंग रूम, सोने के कमरे तथा बाहर बाल्कनी में भी सुव्यवस्थित ढंग से रखाते हैं | स्वभाव से अनुशासनप्रिय होने के कारण, पुस्तकों पर पर्याप्त पैसा खर्च कर उन्हें कलात्मकता के साथ सम्भालकर रखाते हैं | नयी और पुरानी पत्र-पत्रिकाएँ यथास्थान होती हैं | लिखे जा रहे लेखों के पृष्ठ तथा पाण्डुलिपियाँ लाल-नीले-हरे पेन, पैंसिलों की पंक्तियाँ, पत्राव्यवहार, लोगों के पते, फोन नंबर सब अक्षर क्रम से डायरी में नोट किए हुए मेजपर मिलते हैं और जरुरत के समय आसानी से पाये जा सकते हैं |

४] निष्कर्ष

डॉ. देवेश ठाकुर के व्यक्तित्व के बाहयरूप तथा आंतरिक रूप के उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि, वे एक संपन्न तथा आदर्श व्यक्तित्व

के धनी हैं | उनके व्यक्तित्व के अध्ययन से पाठकों को जीवन के संघर्ष-पथ पर ईमानदारी के साथ अथक परिश्रम करने की प्रेरणा मिल जाती है | देवेशजी की उपलब्धियों का रहस्य ही उनकी ईमानदारी और परिश्रम है| वे प्रतिभा की अपेक्षा "अभ्यास" को अधिक महत्व देते हैं | देवेशजी की जिन्दगी के विविध मोड इस सिध्दान्त के प्रत्यक्ष प्रमाण हैं | संघर्ष से लडते हुए वे आज इस उँचाई तक पहुँच पाये हैं | समाज को रचनात्मक रूप में कुछ देने की इनकी महत्वाकांक्षा है | इस महत्वाकांक्षा ने ही इन्हें कठोर परिश्रमी बनाया है |

देवेशजी की स्पष्टवादिता के कारण इनके अधिक शत्रु बने हैं | लेकिन सच्चाई कहने की आदत इनकी कमजोरी नहीं कही जा सकती | यह उनके व्यक्तित्व का एक गुण हैं | वे सीधे-सादे, सरल-भावुक, हँसमुख तथा संवेदनशील, संघर्षशील, दृढनिश्चयी, महत्वाकांक्षी तथा ईमानदार हैं | देवेशजी का यह व्यक्तित्व नवयुवकों के लिए आदर्श तथा प्रेरणादायी रहा है |

५] कृतित्व

हिन्दी साहित्य में रचनाधर्मी साहित्यिक और प्रगतिशील समीक्षक के रूप में डॉ. देवेशजी का नाम अपना विशेष स्थान रखाता है | अपनी साहित्य रचना के कार्यों में साहित्य - गुरू के रूप में वे कहते है - "मेरे अनुभाव ही मेरे साहित्यिक गुरु हैं | वैसे गंभीर अध्ययन करने की प्रेरणा मुझे आचार्य नन्ददुलारे बाजपेयी से तब मिली जब मैं उनके निर्देशन में पीएच्. डी. के लिए शोधकार्य कर रहा था | वहीं डॉ. भानुदेव शुक्ल और डॉ. प्रेमशंकर ने मुझे लिखान-पढने की प्रेरणा दी | उपरान्त डॉ. भागीरथ मिश्र के निर्देशन में डी. लिट्. के लिए अध्ययन करते हुए मुझे व्यवस्थित रूप से अध्ययन करने की दिशा मिली|| वैसे मैं यद्यपि आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का कभी विद्यार्थी नहीं रहा, लेकिन उनके लेखान व चिंतन में मैंने हमेशा अपने भावों की प्रतिच्छाया देखी है | यदि मुझे किसी

को अपना साहित्यिक गुरु कहना ही पडे तो मैं उसके लिए आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी जी का नाम ही लेना चाहूँगा यद्यपि प्रत्यक्ष रूप से मैं उनका विद्यार्थी कभी नहीं रहा |"[२३]

साहित्य, साहित्यकार के अथाक प्रयास एवं अनवरत साधना का प्रतिफल है | अभिव्यक्ति की कलात्मक उँचाई तक पहुँचने के लिए कवि या लेखाक को प्रारम्भिक प्रयासों की अनेकानेक तिक्त-मधुर स्मृतियों की राह से होकर गुजरना पडता है | बचपन से ही देवेशजी लेखान-कार्य कर रहे हैं | जिसमें, एकांकी, कविता, बालसाहित्य, कहानी, उपन्यास और शोध तथा समीक्षा आदि सभी प्रकार के साहित्य का समावेश है | जिसका संक्षिप्त में विवेचन प्रस्तुत है |

क] <u>एकांकी : इन्सान की मौत</u>

कविता करने के पहले देवेशजी ने प्रस्तुत "इन्सान की मौत" एक लम्बा एकांकी लिखा था, जिस नजीबाबाद में खोला भी गया था |

ख] <u>कविता</u>

देवेशजी लगभग इन्टरमीडिएट के दिनों से ही कविता करने लगे थे | उनकी कविताओं के दो संग्रह "मयुरिका"[१९४५] और "अन्तर-छाया"[१९५७] प्रकाशित हो चुके हैं | "मयुरिका" इस पहले कविता संग्रह में "तारे नभ पर ...." से लेकर "मेरी रात सुहागिन है ...." तक तीस [३०] कविताओं का संकलन हुआ है |"[२४] दूसरा काव्य संग्रह "अन्तरछाया" में "यह नेह मिलन की रात ...." से लेकर "अन्तिम गीत" तक तेरह [१३] कविताओं का समावेश है |"[२५] इन दोनों काव्य संग्रहों के आधारपर देवेश की साहित्यिक विकासयात्रा के महत्वपूर्ण बिन्दुओं को बडी आसानी से रेखांकित किया जा सकता है | इसमें वैयक्तिक भूमिका पर आत्मसंस्कार की भावना का निरूपण हुआ है |

इसके बाद सितम्बर १९५६ से दिसम्बर १९९० की अवधि में समय समय पर लिखी कविताएँ १९९२ में प्रकाशित "अवकाश के क्षणों में" नामक काव्य संग्रह में संकलित हुयी हैं | "इसमें "हरखी पुरवैया" से लेकर

"शिकार के लिए" तक ४३ कविताओं का समावेश हैं |"[२६] काव्य संग्रह की अधिकांश कविताएँ सामाजिक विसंगति, कुरूपता और आज के व्यक्ति-जीवन के छल प्रपंचों को रेखांकित करती हैं |

उपर्युक्त तीनों "मयुरिका", "अन्तरछाया", "अवकाश के क्षणों में" काव्यसंग्रहों का संकलन "कविताएँ" नामक संग्रह में किया गया है |

ग] बाल साहित्य तथा कॉलेजोपयोगी

देवेशजी के बाल साहित्य में मुख्यत: दो रचनाओं का समावेश हैं | सन् १९७८ में प्रकाशित "दो सहेलियाँ" इस किशोर कहानियों के संग्रह में "दो सहेलियाँ" से लेकर "बकरी का बच्चा" तक सर्वथा किशोरों के लिए प्रेरक आठ कथाओं का संकलन है |"[२७]

"ममता" यह किशोरोपयोगी, रोमांचक, वैज्ञानिक उपन्यास सन् १९७० को प्रकाशित हुआ | यह संवेदनायुक्त, स्वस्थ और रचनात्मक भूमिका पर लिखा गया किशोरोपयोगी उपन्यास है | बाल साहित्य की इन रचनाओं से देवेशजी ने बालकों के संवेदनशील मस्तिष्क को हीनता की ग्रंथि से मुक्ति दिलकर नई जिम्मेदारियों के प्रति कर्तव्यबोध को जागृत किया है |

कॉलेजोपयोगी ग्रन्थों में [१] हिन्दी निबन्ध प्रदीप, [२] कॉलेज निबंध और [३] रचना तथा व्यवहार वीथिका [पत्राचार] ये रचनाएँ विद्यार्थियों के लिए मार्गदर्शक तथा अत्यंत उपयुक्त रही हैं |

घ] कहानी

कविता की सीमित भावभूमि से उठकर गद्य के सुविस्तृत राज्यमार्ग पर चलते हुए देवेशजी ने कुछ कहानियाँ भी लिखी हैं | "कहानी संग्रह "सिर्फ संवाद" में बारह कहानियाँ संकलित हैं |"[२८] पहली शाम, संबंध, अब यह भी नहीं .... बेगानी शादी में, सिलसिला, बुध्दिजीवी, रिश्ते, आदि कहानियों में सामाजिक तथा मानवीय असंगतियों को प्रगतिशील दृष्टि से निरूपित किया गया है |

ड.] उपन्यास

१] भ्रमभंग

"भ्रमभंग" यह देवेशाजी का प्रथम उपन्यास "भारतीय ज्ञानपीठ" प्रकाशन व्दारा १९७५ में प्रकाशित हुआ | इसका मराठी भाषा में भी अनुवाद हुआ है | मध्यवर्गीय संघार्षो, संकल्पों, आशा आकांक्षाओं और उपेक्षाओं की यह "चन्दन-कथा" है | "भ्रम-भंग" निम्नमध्यवर्गीय युवक की पारिवारिक, सामाजिक त्रासदियों का दस्तावेज है | अपने अस्तित्व को बनाए रखाने और परिवार को अपने साथ ले चलने के संकल्प में आई अडचनों, असुविधाओं और अवमाननाओं की यह संघार्ष गाथा अत्यंत सहज और प्रवाही शैली में प्रस्तुत की गयी है | परम्परागत बिम्ब को तोडकर नायक चन्दन भारत की विकासोन्मुख युवा-पिढी का प्रतीक बना हुआ है | मध्यवर्गीय जीवन की वास्तविकता की प्रामाणिक जानकारी देना तथा समकालीन पूँजीवादी समाजव्यवस्था की असंगतियों का उद्घाटन करना आदि उद्देश्यों की पूर्ति "भ्रमभंग" में सफलता से हुई है | यह हिन्दी उपन्यास साहित्य की एक नयी उपलब्धि है |

२] प्रिय शाबनम

देवेशाजी के इस उपन्यास का प्रकाशन सन १९७८ में हुआ है | "प्रिय शाबनम " संस्कारग्रस्त व्यक्ति की नियति को अभिव्यक्ति देने के साथ-साथ सार्थक जीवन की दिशा निर्देशक कथा है | मात्र एक पत्र के रूप में कही गयी यह कहानी देवेशाजी के शिल्प-कौशल को भी रेखांकित करती है |"[२९] यह मध्यवर्गीय बुध्दिजीवी की अत्यन्त सरस एवं प्रभावपूर्ण ढंग से प्रस्तुत एक अनुठी गाथा है | इसमें आज के माहौल में मध्यवर्गीय बुध्दिजीवी जिन विभिन्न त्रासदियों से गुजरता है, उसका यथार्थ जीवन्त चित्राण इसमें किया है | उपन्यास का संदेश निराशा के कुहासे को चीर कर गंतव्य की ओर बढाने के लिए संकल्प शक्ति जगाने का है | अत: लघु उपन्यासों की शृंखला में "प्रिय शाबनम " एक विशिष्ट रूप में याद अवश्य रहेगा |

३] कौंचघार

"भ्रमभंग" और "प्रिय शबनम " के बाद "कौंचघार" देवेशजी का अगला उपन्यास ही नहीं बल्कि अगला कदम और एक लम्बी छलांग है | "कौंचघार" बम्बई शहर का ऐसा कौंचघार है, जिसकी दीवारें कौंच से बनी हैं और उसमें रहनेवाले सभी लोग नंगे हैं, जो आदमी कहलाते हैं किन्तु आदमीयत से दूर हैं | यह महानगरीय जीवन के यथार्थ को अनेक कोणों से प्रस्तुत करता हुआ आज के समाज में व्याप्त विसंगतियों, सम्बन्धों की विद्रूपता और जीवन-मूल्यों के तीव्रतर -ह्रास को व्यंग्यता से प्रकट किया है | इसप्रकार "कौंचघार" महानगरीय संवेदनहीन एवं यांत्रिक संसार का प्रामाणिक दस्तावेज है |

४] इसीलिए

हिन्दी के प्रखर समीक्षक एवं प्रगतिचेता कथाकार देवेश ठाकुर की नवीन कथ्य एवं शिल्प से समन्वित चौथी औपन्यासिक कृति "इसीलिए" का प्रकाशन सन १९८४ में हुआ | "यह नवीन तथ्य स्थापित करने का प्रयास करता है कि सुविधा सुख की गारन्टी नहीं होती |"[30] सभी सुख, सुविधाओं के बावजुद भी अनेक अवसरोंपर अतिशय आस्था और भावुकता भी व्यक्ति को अनजानी-अथाह कठिनाइयों में डाल सकती है | सुख तो व्यक्ति के अपने हाथ में होता है | लेखक कहना चाहते हैं कि बडी से बडी विपत्ति से भी अगर हम अपनी दृष्टि को व्यापक बना लें तो यह विपत्ति सहज रूप से हल हो जाती है | सुविधा में मात्र भौतिक आकर्षण की चीज होती हैं | उससे व्यक्ति को आश्वस्ति तो मिल सकती है, लेकिन पूर्णतया मानसिक शांति नहीं |

५] अपना अपना आकाश

सन १९८४ मे ई. में प्रकाशित "अपना अपना आकाश" उपन्यास में देवेशजी ने समाज के उच्च-वर्ग की मानसिकता और जीवनचर्या का रेखांकन किया है | इसमें संपन्न परिवारों में संतान की अपेक्षा और इस उपेक्षा की प्रतिक्रिया स्वरूप संतान का कठिन स्थितियों में फंसने की कहानी है | साथ ही प्रणय के संदर्भ में वर्गीय सानुकूलता का प्रश्न भी उभारा है | यह

उपन्यास अभिजात्य-वर्ग की पारिवारिक पोल खोलनेवाला प्रभावी उपन्यास है |

६] जनगाथा

सन १९८६ को प्रकाशित "जनगाथा" देवेशजी की जनवादी परम्परा की सार्थक कृति है | ""जनगाथा" में देवेश ठाकुर व्दारा संश्लिष्ट शिल्प की प्रस्तुति तथा सामयिक स्थितियों का उपन्यासी करण करने का अपूर्व कौशल सिध्द हुआ है |"[३१] इसकी रचनाधर्मिता एक नया मुहावरा तलाशती है | भारतीय जनता विकृत राजनीति व्दारा लगातार होनेवाले दमन, हिंसा, अत्याचार का विरोध न कर उसे सहती चलती है | इस उपन्यास से अप्रत्यक्ष ही सही, इस पस्त मनोबल से आवेष्ठित समाज के सामान्य जन में आत्मविश्वास और अराजकता के प्रति विद्रोह की सुगबुगाहट पैदा करने की कोशिश की गई है | देवेशजी की यह अपूर्व क्षामता, प्रतिभा, निर्भिक अभिव्यक्ति और पैनी सूझाबूझ की अन्यतम उपलब्धि है |

७] गुरुकुल

सन १९८९ में प्रकाशित "गुरुकुल" उपन्यास में देवेशजी ने अपने प्राध्यापकीय जीवन के अनुभावों को सार्वजनिक परिवेश दिया है और आज के अध्ययन के विरोधी, गुटबाज, एक सिरे से भ्रष्ट तथा जोड-तोड को तुच्छी राजनीति चलानेवाले अध्यापक वर्ग की पोल खोली है | यह उपन्यास विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग पर केन्द्रित है | प्रोफेसर का पद और उसे प्राप्त करने के लिए किए जानेवाले प्रयास इसी एक घटना का अंकन इसमें मिलता है | अध्यापक के साथ साथ कुलपति आदि सबको देवेशजी ने बेनकाब किया है | इस उपन्यास के रूप में देवेशजी एक सशक्त और सोद्देश्य रचनात्मक कृति देने में सफल रहे हैं |

८] शून्य से शिखार तक

प्रस्तुत रचना "शून्य से शिखार तक" में देवेशजी ने व्यक्तिवादी और आत्मकेन्द्रित लेखन और लेखक-वर्ग पर करारा प्रहार भी किया है |

यहाँ लेखक की दृष्टि समाज-सापेक्ष रही है और उसने वैशाली के माध्यम से ऐसे एकांतिक लेखन की सार्थकता पर सफल प्रश्न चिन्ह लगाया है।"[३२] इसमें नारी-चेतना, स्वाभिमान की रक्षा के लिए नारी की जागरूकता और स्व-व्यक्तित्व निर्माण के लिए नई दिशाओं की ओर उन्मुख होती नारी का बेबाक चित्रण हुआ है।

९] अन्तत:

"अन्तत:" देवेशजी का अबतक प्रकाशित अन्तिम उपन्यास है। इसमें उन्होंने महानगरीय जीवन जी रहे व्यक्तियों के स्त्री-पुरुष संबंधों और प्रेमविवाह की असफलताओं को विश्लेषित करते हुए अत्यंत संयम और सावधानी के साथ स्त्री-पुरुष के परस्पर संबंध और उसकी आवश्यकता को स्थापित करता है। उपन्यास का कथाक्षेत्र बम्बई है और कथाकाल सन १९९०-९१ का है। १५३ पृष्ठों के उपन्यास की माला विभिन्न शीर्षकों - परिचय १, परिचय २, नये मोड पर और अन्तिम पडाव अन्तत: से पूरी होती है। जैसा कि इस उपन्यास का शीर्षक भी है। डॉ. रवीन्द्रनाथ मिश्र का कथन है कि, "समसामायिक नागरी स्त्री-पुरुष सम्बन्धों की यथार्थ प्रस्तुति : अन्तत:।"[३३]

च] शोध और समीक्षा

डॉ. देवेश ठाकुर उच्चकोटि के रचनाधर्मी कथाकार हैं और उससे भी बढकर प्रगतिशील प्रखर समीक्षक के रूप में प्रसिध्द हैं।

शोध - १] प्रसाद के नारी पात्र।
२] आधुनिक हिन्दी साहित्य की मानवतावादी भूमिकाएँ।

समीक्षा - १] नयी कविता के सात अध्याय।
२] "नदी के द्वीप" की रचना-प्रक्रिया।
३] मैला आँचल की रचना-प्रक्रिया।
४] हिन्दी कहानी का विकास।
५] साहित्य के मूल्य।
६] साहित्य की सामाजिक भूमिका।
७] आलेख।

देवेश ठाकुर के शोध और समीक्षा ग्रन्थों के आधार पर कहा जा सकता है कि, उनकी दृष्टि प्रगतिशील और मानवीय है। उनकी प्रतिबध्दता व्यक्ति के प्रति न होकर समाज के प्रति हैं। सामाजिक विद्रूपताओं का उद्घाटन और समस्याओं का समाधान प्रस्तुत करना वे अपनी रचनाधर्मिता का उद्देश्य मानते हैं। "उनकी डी. लिट. की उपाधि के लिए स्वीकृत शोध प्रबंध "आधुनिक हिन्दी साहित्य की मानवतावादी भूमिकाएँ " मानवतावाद पर किया गया प्रथम तथा मौलिक शोध है।"[३४] "प्रस्तुत सामग्री से उनके अध्ययन की गम्भीरता दृष्टि की स्पष्टता और प्रस्तुति की प्रांजलता प्रतिष्ठित होती है।"[३५]

छ] संपादन कार्य

हिन्दी के प्रख्यात कथाकार और मूर्धन्य समीक्षक देवेशजी ने अपनी रचनाधार्मिता को निभाते समय संपादन कार्य भी सफलता के साथ निभाया है। संपादन कर्म उनकी हॉबी है। कथाक्रम भाग १ [स्वाधीनता के पहले की कहानियाँ] और कथाक्रम भाग २ [स्वाधीनता के बाद की कहानियाँ] में क्रमश: १०७ तथा ६८ कहानियाँ संकलित की गयी हैं। दोनों कथाक्रमों की भूमिकाएँ अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। उनका यह योगदान सराहनीय है। कथावर्ष १९७६, १९७७, १९७८, १९७९, १९८०, १९८१, १९८२, १९८३ के रूप में उनके ८ संकलन प्रकाशित हो चुके हैं। समीचीन कथा वर्ष १९९३, रचना प्रक्रिया और रचनाकार, हिन्दी की पहली कहानी, प्रेमचंद साहित्य के अध्येता : डॉ कमल किशोर गोयनका तथा देवेश ठाकुर रचनावली - १ से ७ खण्ड भी संपादित हो चुके हैं।

प्रस्तुत संपादन कार्य से कहा जा सकता है, देवेशजी की संकल्प शक्ति, अध्ययन और अनुशीलन ने उन्हें हिंदी का एक सफल महत्वपूर्ण समीक्षक बना दिया है। "इससे उनके रचनाधार्मी व्यक्तित्व, मानवीय और स्पष्ट प्रगतिशील दृष्टि तथा शिल्पगत सौष्ठव का स्वरूप सुधी पाठकों के सन्मुख स्पष्ट हो जाएगा - ऐसा हमारा विश्वास है।"[३६]

६] निष्कर्ष

लगभग ३८ वर्षों के लम्बे समय तक अध्यापकीय पेशा करते करते देवेशजी ने १९४५ से अबतक हिन्दी साहित्य के भंडार में ४२ कृतियों का योग दिया है। उनके व्यक्तित्व के अत्यंत विवादास्पद होने के कारण गुटबाज समीक्षाकों ने उनके कृतित्व को उपेक्षित किया। उनके लेखन की चर्चा करने की आवश्यकता नहीं मानी। लेकिन उनके रचनाकार मित्रों के सहयोग और प्रेरणा से उनकी रचनाओं को बहुत बडी ख्याति प्राप्त हुयी है। देवेशजी की जीवन और साहित्य सम्बन्धी दृष्टि प्रगतिशील रही है। उनकी रचना-धर्मिता मूल रूप से मानववादी मूल्यों से प्रेरित है। रचनाओं को केन्द्रिय स्तर व्यवस्था विरोध का है। उन्होंने मानवीय मूल्यों की प्रतिष्ठा की है। आज की अवस्था में व्याप्त विसंगतियों, विद्रूपताओं और भ्रष्ट नेतृत्व पर उनकी लेखानी ने, लगभग सभी रचनाओं ने तीखे व्यंग्य कसे हैं।

देवेशजी की प्रतिभा बहुमुखी है। प्रारम्भिक काल में उन्होंने कुछ कविता संग्रह और एकांकी भी प्रकाशित की हैं। लेकिन नाटक के क्षेत्र में उनकी एक भी कृति नहीं है। शायद यह क्षेत्रा उनके व्यक्तित्व के लिए उपयुक्त नहीं होगा। गद्य की विधाओं में उन्होंने कहानियाँ और उपन्यास के क्षेत्र को चुना। इसमें भी उनकी प्रतिभा उपन्यास की विधा में अधिक प्रकट हुयी है। अपने प्रथम उपन्यास "भ्रमभंग" [ज्ञानपीठ, १९७५] के प्रकाशन के होते ही उन्हें दृष्टिसंपन्न कथाकार के रूप में साहित्य जगत् में ख्याति प्राप्त हुई।

देवेशजी की साहित्य एवं समीक्षा सम्बन्धी दृष्टिकोण का अध्ययन करने से यह निष्कर्ष स्पष्ट है, कि उनकी विचारधारा मार्क्सवाद के करीब पहुँचती अवश्य है किन्तु हम उन्हें मार्क्सवादी नहीं कह सकते। वे दिखाने में तो कम्युनिस्ट लगते हैं लेकिन मानवतावादी हैं। वस्तुत: वे किसी वाद से जुडे न होकर सहज मानवीय धरातल पर समाज से जुडे हुए हैं।

साहित्य का उददेश्य समाज और मानवजीवन का उत्कर्ष मानने के कारण ही इन्होंने "कला कला के लिए" वाले सिध्दांत का खंडन किया है | और वे "कला जीवन के लिए" सिध्दांत के समर्थक हैं |

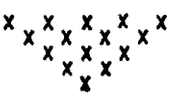

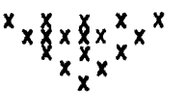

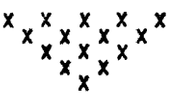

-: सन्दर्भ :-

१. सम्पा. डॉ. नन्दलाल यादव : "देवेश ठाकुर : व्यक्ति, समीक्षक और कथाकार" : पृ. २३
[सुदेश कुमार : "एक और देवेश"]

२. प्रा. सतीश पाण्डेय : "कथा-शिल्पि देवेश ठाकुर" : पृ. २५
३. [डॉ. इन्दुबाली [चंडीगढ[ ]

३. डॉ. भानुदेव शुक्ल : "देवेश ठाकुर : प्रश्नों के घेरे में" : पृ. १५

४. परिशिष्ट - ४ : "देवेश ठाकुर से एक साक्षात्कार" : पृ १५८

५. डॉ. चंद्रकांत बांदिवडेकर: "आधुनिक हिन्दी उपन्यास का सृजन और आलोचना" : पृ. १०४

६. प्रा. सतीश पाण्डेय : "कथा-शिल्पि देवेश ठाकुर" : पृ. २६

७. वही : वही : पृ. १८
८. [डॉ. चन्द्रलाल दुबे, धारवाड]

८. वही : वही : पृ. २०
[डॉ. सरजू प्रसाद मिश्र]

९. परिशिष्ट - ४ : "डॉ. देवेश ठाकुर से एक साक्षात्कार: पृ. १५४

१०. सम्पा. नन्दलाल यादव : "देवेश ठाकुर : व्यक्ति, समीक्षक, और कथाकार" : पृ. २४
[सुदेश कुमार : "एक और देवेश"]

११. डॉ. भानुदेव शुक्ल : "देवेश ठाकुर : प्रश्नों के घेरे में : पृ. २७

१२. वही : वही : पृ. २३

१३. सम्पा. नन्दलाल यादव : "देवेश ठाकुर : व्यक्ति, समीक्षक और कथाकार" : पृ. २६
[जितेन्द्र सिंह : मित्रों के जंगल में एक वृक्ष देवदारु का]

१४. प्रा. सतीश पाण्डे य : "कथा-शिल्पि देवेश ठाकुर" : पृ. १५
[डॉ. त्रिभुवन राय, बम्बई]

१५. वही : वही : पृ. २५
[डॉ. इन्दु बाली, चंदिगढ]

१६. वही : वही : पृ. २३
[डॉ. इन्दु बाली, चंदीगढ]

१७. सम्पा. नन्दलाल यादव : "देवेश ठाकुर : व्यक्ति, समीक्षक और कथाकार" : पृ. २७

[जितेन्द्र सिंह : मित्रों के जंगल में एक वृक्ष देवदारु का]

१८. देवेश ठाकुर : "भ्रमभंग" : पृ. ७

१९. प्रा. सतीश पाण्डेय : "कथा-शिल्पि देवेश ठाकुर : पृ. १३

[विश्वनाथ [नवभारत टाइम्स] बम्बई]

२०. सम्पा. डॉ. नन्दलाल यादव : "देवेश ठाकुर : व्यक्ति, समीक्षक और कथाकार" : पृ. ३५

[रतिलाल शाहीन : "साहित्यिक दृष्टि और भ्रमभंग के दंश"]

२१. सम्पा. डॉ. ब्रम्हदेव मिश्र: "पांडुलिपि" : पृ. ४९

[सुशीला ठाकुर : "देबू : एक बिगडैल पति लेकिन जिम्मेदार गृहस्थ]

२२. डॉ. भानुदेव शुक्ल : "देवेश ठाकुर : प्रश्नों के घेरों में : पृ. २९

२३. सम्पा. नन्दलाल यादव : "देवेश ठाकुर : व्यक्ति, समीक्षक और कथाकार" : पृ. ४९

[रतिलाल शाहीन : "साहित्यिक दृष्टि और भ्रमभंग के दंश"]

२४. सम्पा. डॉ. रोहिणी शिवबालन : "देवेश ठाकुर रचनावली - सात : पृ. ३ - ५०

२५. वही : वही : पृ. ५२ - १७२

२६. वही : वही : पृ. १०५ - १८४

२७. वही : वही : पृ. २६५ - ३०५

२८. वही : वही : पृ. १८७ - २६१

२९. वही : "देवेश ठाकुर रचनावली -एक : पृ. ६

३०. वही : "देवेश ठाकुर रचनावली - दो: पृ. ६

३१. वही : वही : पृ. ६

३२. वही : "देवेश ठाकुर रचनावली -तीन: पृ. ६

३३. सम्पा. डॉ. ब्रम्हदेव मिश्र: "पाण्डुलिपि" : पृ. २१४

[डॉ. रवीन्द्रनाथ मिश्र : "समसामयिक नागरी स्त्री-पुरुष सम्बन्धों की यथार्थ प्रस्तुति : अन्तत:"]

३४. सम्पा. डॉ. रोहिणी : "देवेश ठाकुर रचनावली-चार : पृ. ६

३५. वही : "देवेश ठाकुर रचनावली-छ: : पृ. ६

३६. वही : "देवेश ठाकुर रचनावली-पाँच : पृ. ६

x x x x x x x x x x x x